Indian J. Soc & Pol. 03(02): 2016: 79-82 **ISSN 2348-0084 (P)**
ISSN 2455-2127 (O)

भारत में सामाजिक रूपान्तरण का नजरियाः स्त्री विमर्श के सन्दर्भ में

बिजेन्द्र सिंह[1]

[1]वरिष्ठ प्रवक्ता– राजनीति विज्ञान विभाग,स्नातकोत्तर महाविद्यालय–पट्टी, प्रतापगढ़, उ0प्र0, भारत

ABSTRACT

भारतीय समाज के सन्दर्भ में जब भी सामाजिक रूपान्तरण जैसे अतिसंवेदनशील विषय पर चर्चा होगी तो मेरा स्पष्ट मत है कि यह चर्चा स्त्रियों की सामाजिक संरचना पर केन्द्रित हुए बिना नहीं रह सकेगी क्योंकि इस समाज रूपी रथ के दो पहिये है, जिन पर यह समाज गतिशील है। वो हैं, क्रमशः स्त्री एवं पुरूष। यह एक लम्बी अवधि से बहस का मुद्दा रहा है कि स्त्री विमर्श को विचारधारा व जीवन पद्धति माना जाय या नहीं। भारत के सन्दर्भ में हम कह सकते है कि भारत एक ऐसा देश है जहाँ अन्तिम पायदान के भीतर भी कई अंतिम स्थितियां देखी जाती है। ऐसे में भारत के सामाजिक संरचना का अध्ययन या विमर्श करते समय स्त्री पुरूष को स्पष्ट रूपसे दो भागों में बांट देना न्यायसंगत न होगा या यूं कहें कि यह एक अधूरा नजरियाँ होगा। इसी क्रम में हम देखते है कि भारत 1990 के दशक से कई बड़े सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक बदलावों का साक्षी रहा है। इसी का परिणाम रहा है कि विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र एवं इतनी सारी विविधताओं से भरे भारत देश ने वैश्विक परिदृश्य में अपना हस्ताक्षर इतने सशक्त ढंग से किया है कि अब भारत को तीव्रगति से उभरती हुई महाशक्ति माना जा रहा है। ऐसी स्थिति में भारतीय समाज में जो रूपान्तरण की स्थिति बनी है, उसमें स्त्रियों की क्या दशा एवं दिशा है? या होगी? इसी पर मेरा यह पूरा लेख आधारित होगा।

KEYWORDS: *सामाजिक रूपान्तरण, स्त्री दशा*

वर्तमान समय में जबकि स्त्री पुरूष समानता एक विश्वव्यापी मूल्य है ऐसे दौर में भी जब हम भारत के सन्दर्भ में सामाजिक रूपान्तरण की बात करते है तो बरबस ही हमारा ध्यान निर्भया कांड के रूप में सामाजिक सुरक्षा की ओर से गुजरता हुआ, धार्मिक क्षेत्र में शनिदेव की पूजा स्त्रियों को नहीं करनी चाहिए से सबरी वाला मंदिर विवाद आदि रास्ते से चलने पर मजबूर कर देता है। वजह भारत में स्त्रियों की सामाजिक रूपान्तरण की स्थिति इन्ही रास्तों से होकर गुजरती है, अगर यह बात पूर्णतया सत्य नहीं है, तो भी आंशिक सत्य अवश्य है। किन्तु समय के साथ स्थितियों में परिवर्तन अवश्य आया है। यही वह कारण है, जो 20 वर्षीय छात्रा निकिता आजाद को ''हैप्पी टू ब्लीड'' (रजः स्राव का सुख) आंदोलन चलाने की शक्ति प्रदान करता है। निश्चित तौर से अभी राजनीतिक क्षेंत्र में स्त्री सक्रियता व स्त्री दृष्टि की अति आवश्यकता है। क्योंकि ये सामाजिक रूपांतरण के लिए मूल कारक तत्व के रूप में देखे जा सकते हैं। संविधान, विधि, कानून, लोकतांत्रिक व्यवस्था एवं राष्ट्र की सोच एवं प्रवृत्ति को किस सीमा तक बदला जा सकता है? या बदला जा सका है? यह प्रयास स्त्री की सामाजिक स्थितिया एवं उनके सामाजिक रूपान्तरण से सीधे–सीधे जुड़ा हुआ है। वर्तमान के आर्थिक युग में जबकि सामाजिक–राजनीतिक क्षेत्र को वित्तीय व्यवस्था पूर्णतया प्रभावित कर रही है, बल्कि यूं कहें तो ज्यादा उचित होगा कि नियंत्रित कर रही हैं। तब प्रत्येक संरचना एक ऐसी आर्थिक इकाई में तब्दील हो गई है, कि प्रतीत होता है कि जैसे वह संरचनाएं सामाजिक एवं राजनीतिक विचार की वास्तविकता से काट दी गई हों। यहीं तक यह क्रम नहीं चलता है बल्कि इसके आगे यह विरोध करने वाले विचारों को ऐसे प्रतीकों में तब्दील कर देता है जिससे हमें स्वस्थ एवं स्वायत्त मानसिकता का विकास करने वाले समाज का भ्रम पैदा होता है। इन स्थितियों में विद्रोह की प्रक्रियाओं को भी रूढ़ बना दिया जाता है और उन्हें ऐसे दर्शाया जाता है जैसे कि वह अनावश्यक एवं उपाहास का विषय हो। स्त्री एवं लैगिग विषय ऐसे ही मुद्दे हैं।

जब हाशिये पर मौजूद स्त्री संघर्ष कर रही हों– सामाजिक और राजनीतिक स्तरों पर तो ऐसे में, उनकी भाषा और नजर को हमारा समय किस तरह से विकसित कर रहा है, इस पर गौर करना जरूरी हो जाता है। और इस पर गौर करने के बाद यह कहने में कतई संकोच नहीं कि वर्तमान में आंदोलन व विद्रोह की संभावनाओं को ध्वस्त करने वाली और असंतोष से उपजी स्थिति को अपने अनुकूल ढाल लेने वाली अर्थ की व्यवस्था मजबूत हुई है। ऐसे में स्त्रियों की सामाजिक रूपान्तरण की दिशा एवं गति भी बदली है।

स्त्रियों के सामाजिक रूपान्तरण के इस क्रम में आगे बढ़ते हुए हम यह पाते है कि सामाजिक रूपान्तरण की जो गति 80 के दशक से महिला आंदोलनों को प्राप्त होती थी वह आज के दौर में मंद हुई है। कारण के रूप में हम कह सकते है कि महिला आन्दोलनों के संस्थानीकरण की प्रक्रिया तीव्र हुई है, जिससे महिलाओं के सामाजिक रूपान्तरण की गति मंद हुई है। किंतु उपरोक्त कथन का आधार ढूंढने पर हम पाते है कि पूरे देश में

1: Corresponding Author

अलग–अलग स्तर पर छोटे बड़े रूप में महिला आंदोलन लगातार चल रहें हैं और भारतीय समाज में महिलाओं का सामाजिक रूपान्तरण लगातार अग्रगामी पथ पर गतिशील है। यह अलग बात है कि कभी रूपान्तरण की गति तीव्र होती है और कभी मंद। पर आज के दौर में शायद ही ऐसी कोई जगह हो जहां किसी न किसी रूप में महिला आंदोलन के माध्यम से स्त्रियों के सामाजिक रूपांतरण की प्रक्रिया न चल रही हो। किंतु मुझे लगता है जब हम कहते है कि सामाजिक रूपांतरण की प्रक्रिया मंद है तो हम कहीं न कहीं मध्य वर्गीय महिलाओं का सामाजिक रूपांतरण तलाश रहे होते है और जब हम उसे नहीं देखते तो प्रक्रिया को खारिज़ करने के स्तर पर पहुँच जाते है। जबकि सत्य यह है कि सामाजिक रूपान्तरण की प्रक्रिया सतत् चलती रहती है। भारत में स्त्रियों के सामाजिक रूपांतरण को भारत की जटिल परिस्थितियों, आर्थिक–नीतियों, जातीय मसलों, साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण, तेजी से बदलते आर्थिक परिदृश्य आदि के सन्दर्भ में ही व्याख्यायित करके, समझा जा सकता है। जहाँ तक मेरी समझ है कि महिलाओं ने विभिन्न महिला आंदोलनों के माध्यम से उपरोक्त वर्णित जटिल स्थितियों में जटिल सामाजिक आर्थिक सम्बन्धों को बड़ी बारीकी से समझकर अपनी रणनीति को तैयार किया एवं समग्र दृष्टि विकसित की तदनुसार सामाजिक रूपान्तरण को आगे की ओर जाने वाली दिशा में गतिशील कर सकी। यहां पर मेरा यह स्पष्ट मत है कि महिलाओं के सामाजिक रूपान्तरण को उनकी आजादी एवं अधिकारों से जोड़कर देखना बहुत तर्क संगत नहीं होगा, क्योंकि स्त्रियों के सामाजिक रूपान्तरण की प्रक्रिया का मकसद महिलाओं की मुक्ति के सवालों के साथ–साथ पूरे समाज का आमूल–चूल रूपान्तरण से सम्बन्धित है।

भारतीय महिलाओं का सामाजिक रूपान्तरण एक व्यापक मुद्दा है। यह कोई एक विमीय प्रक्रिया नहीं है। यह प्रक्रिया बहुविमीय है, इसमें स्थान, विचार, नेतृत्व की अत्यन्त विविधता रहती है। सामाजिक रूपान्तरण की प्रक्रिया सिर्फ शहरी महिलाओं तक ही सीमित नहीं रही है, बल्कि इसकी पहुँच ग्रामीण इलाको के साथ–साथ आदिवासी इलाकों में भी रही है। इस सबके मूल में रूपान्तरण का एक प्रमुख उद्देश्य रहा है शोषण एवं असमानता से मुक्ति। भारत एक ऐसा देश है जहां उत्तर–दक्षिण, पूरब–पश्चिम, शहरी– गॅवई, नस्ल, जाति, लिंग, भाषा, धर्म, वर्ग आदि–आदि रूपों में लोगों का विभाजन है। यहाँ एक व्यक्ति के अंदर कई तरीकें की पहचान का अस्तित्व रहता है और अगर वह महिला है तो उसका महिला होने का अस्तित्व और भी उसमें जुड़ जाता है। जितने प्रकार का अस्तित्व उतने प्रकार अस्तित्व संकट। ऐसे में यह प्रश्न महत्वपूर्ण हो उठता है कि स्त्रियाँ पौरूष पूर्ण सत्ता व वर्चस्व से अपने को मुक्त कर अपने विभिन्न अस्तित्व को विकसित करने वाले पथ पर कितना सफर तय कर चुकी है? अपनी सामाजिक स्थितियों के आधार पर व किन राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक लक्ष्यों को लेकर चल रही हैं?

व्यतीत हुये पूर्व के कुछ दशक एक नई संस्कृति को सामने प्रस्तुत करता है। वह संस्कृति युद्ध की संस्कृति है जिसमें राष्ट्र, धर्म, और संस्कृति आदि विभिन्न आयाम नई दृष्टि से विश्लेषण की माँग करते है। किन्तु इसके साथ ही यह बात भी महत्वपूर्ण है कि ताकतवर संरचनाओं के बाहर एक और बड़ा समाज और सांस्कृतिक वर्ग गठित होता रहता है जिसमें अपने भीतर संगठित होने वाले नये विचारों को गढ़ने की एक गजब की अभूतपूर्व ताकत होती है। यही ताकत नये संगठित होने वाले वर्ग के परिवर्तन की आवाज होती है। इस परिप्रेक्ष्य में स्त्री समाज की वास्तविक भागीदारी या उनके सामाजिक रूपान्तरण को परखना तर्कसंगत होगा। स्त्री की आत्मनिर्भरता से जुड़े आधुनिक मिथक और विवाह एवं परिवार जैसी संस्थाओं पर राज्य का नियंत्रण व अर्थव्यवस्था के अनुसार स्त्रियों के वर्तमान स्वरूप में परिवर्तन सामाजिक रूपान्तरण के अध्ययन का महत्वपूर्ण केंद्र हो सकता है।

स्त्रियों के सामाजिक रूपान्तरण की बात करें तो उसमें कार्यक्रम, नेतृत्व, संगठन, विचारधारा एवं उद्देश्य महत्वपूर्ण तत्व है। इन सारे तत्वों में कोई निश्चित या स्थिर नहीं होते हैं। बल्कि समय–सापेक्ष विकसित होते रहते है एवं सामाजिक रूपान्तरण की विभिन्न अवस्थाओं में परिवर्तनशील भी रहते है। भारत के संदर्भ में महिलाओं में सामाजिक रूपान्तरण की प्रक्रिया को हम 600 वर्ष पूर्व बौद्ध धर्म में प्रवेश के लिए दिये जाने वाले धरने से देख सकते हैं। कह सकते है कि बौद्ध धर्म में स्त्रियों को लेकर जो विभेदकारी सिद्धांत कार्यकर रहा था उसके विरूद्ध स्त्रियों की सामाजिक, राजनीतिक एवं धार्मिक चेतना ने उनको संगठित किया या सामाजिक रूपसे रूपान्तरित किया। आज जिस संदर्भ में महिलाओं की सहभागिता को लेकर 80 के दशक में हुए तमाम आंदोलन जैसे– बलात्कार विरोधी आंदोलन, बोधगया भूमि–संघर्ष, दहेज विरोधी आंदोलन, मंहगाई विरोधी आंदोलन, सती प्रथा विरोधी आंदोलन आदि में देखते है– उसको हम स्त्रियों का धनात्मक सामाजिक रूपान्तरण की संज्ञा में रखकर देख सकते है। इसके साथ ही साथ श्रमिक महिलाओं कें संघर्ष जिसमें चिपको आंदोलन, धूलिया का आदिवासी संघर्ष, छत्तीसगढ़ मुक्ति मोर्चा से जुड़ी श्रमिक महिलाओं का संघर्ष, निप्पाणी के बीड़ी कामगार महिलाएं या केरल की मछुआरिनों के संघर्ष की भूमिका भी स्त्रियों के सामाजिक रूपान्तरण में दास्तान कहती है। 80 के दशक में सामाजिक परिवर्तन एवं मानसिक गुलामी से मुक्ति की जो तड़प भारतीय महिलाओं में पाई गई उसने भारतीय स्त्रियों के सामाजिक रूपान्तरण को मजबूत आधार प्रदान किया।

90 के दशक के भारत में महिलाओं के सामाजिक रूपांतरण का यह क्रम सतत् विकसित होता रहा किंतु यहां यह जरूर है कि रूपान्तरण की गति अवश्य ही मंद पड़ी। किंतु इसके लिए 90 के दशक की परिस्थितियों को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है जिनके कारण यह गति मंद हुई। यह दौर सिर्फ

महिलाओं के सामाजिक रूपान्तरण के लिए ही नहीं बल्कि किसी भी प्रकार के सामाजिक रूपान्तरण हेतु होने वाले आंदोलनो के लिए कठिन था। 90 के दशक के बाद भारत में आई नई आर्थिक नीति के बाद भारत की व्यवस्था एवं सामाजिक, सांस्कृतिक संरचना में एक बहुत बड़ा बदलाव आया। इस बदलाव को हम सबने देखा कि भारत के भीतर जो दो प्रकार का भारत था – एक वह जो छोटा था किंतु उसके हाथों में संसाधनों की बाढ़ आ गई और दूसरी ओर वह भारत जो बड़ा था किन्तु निरन्तर विपन्नता के दल–दल में धसता जा रहा था। इसी प्रकार इन दो भारत में महिलाओं का पारस्परिक उतार–चढ़ाव देखा जा सकता है। भूमंडलीकरण के आने से जो समस्याएं भारत देश में पैदा हुई उनके प्रति छद्म संवेदनशीलता दिखाते हुए देश में गैर सरकारी संगठनों की बाढ़ आ गई, जो ज्यादातर भारत देश में विदेशी पूंजी द्वारा संचालित होते थे। इन्हीं विषम परिस्थितयों में भारत में मंडल और कमंडल का दौर चला परिणाम स्वरूप छात्रों का आत्मदाह, छात्र आंदोलन, बाबरी मस्जिद विध्वंस, मुम्बई दंगा उसके बाद गुजरात के जनसंहार आदि ने जहाँ भारतीय समाज के ताने बाने को झकझोरा वहीं जातिगत मान्यताओं ने मजबूती पकड़ी। 1990 के इन विषम परिस्थितियों से भरे भारत में अगर महिलाओं पर दृष्टि डालें तो पाते है कि महिलाओं के सामाजिक रूपांतरण के लिए यह दौर अत्यंत चुनौतीपूर्ण रहा। क्योंकि इस दौर के संरचनागत स्तर पर हुए बहुत सारे परिवर्तनों ने महिलाओं को भी अपने आंदोलनों को एक निश्चित संरचना में आने को बाध्य किया। महिला आंदोलन वह नहीं है कि किसी भी मुद्दे पर एकत्रित होकर एक मंच पर आ जाना, बल्कि महिला आंदोलन का आधार संरचनागत असमानताओं से लड़ने के साथ ही साथ लोक तांत्रिक मूल्यों की ओर आगे बढ़ना है। यह वही दौर है जब महिलाओं ने वर्ल्डबैंक, आई0एम0एफ0, और विदेश की तमाम फैडिंग एजेन्सियों के जाल को जिसमें अच्छी नौकरी, अच्छी सैलरी, बेहतर शोध के लिए उत्तम फंडिग द्वारा वास्तविक मुद्दों से हटकर उनके सुविधानुसार वाले मुद्दों पर केन्द्रित थे को तोड़ा। इतना ही नहीं इस अंधेरे दौर में भी महिलाओं ने धनात्मक सामाजिक रूपान्तरण को गतिशील बनाए रखा। इसी दौर में कई ऐसे भी गैर–सरकारी संगठन मिलते है, जो महिलाओं के हक के लिए बराबर सक्रिय रहे और सामाजिक रूपान्तरण की प्रक्रिया को मजबूती प्रदान की। इस दौर में भूमंडलीकरण की नीतियॉ महिला आंदोलनों की आलोचना का प्रमुख केन्द्र रही। यह वही दौर है जिसमें महिलाओं ने अपने आंदोलनों का दायरा विकसित करते हुए यह घोषित किया कि ''सारे मुद्दे महिलाओं के मुद्दे''। इसी समझ के विकसित होने से महिला आंदोलनों ने अपने मुद्दे सिर्फ अपने तक ही सीमित न रख करके उसे विस्थापन विरोधी अनेकों आंदोलन, बड़े–बांध विरोधी आंदोलन, महिला श्रमिक संगठनों की स्थितियों को लेकर आंदोलनों आदि में एकजुट होकर सामने आई। क्योंकि वे समझ चुकी थी उनके ऋणात्मक सामाजिक रूपान्तरण के पीछे विदेशी कम्पनियों का उनके संसाधनों पर नियंत्रण के कारक को। साथ ही साथ वह यह भेद भी समझ गई थी की कैसे ये कारक वृद्धि करते है पारिवारिक हिंसा की घटनाओं में।

भूमंडलीकरण के दुण्प्रभावों के खिलाफ किसान महिलाओं का संगठन शेतकरी महिला अघाड़ी, ने जो कार्य किया वह महिलाओं के सामाजिक रूपान्तरण का एक उत्तम उदाहरण है। महाराष्ट्र शेतकरी संगठन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा शेतकरी महिला अघाड़ी के 1991 से 1996 के अथक प्रयासों से ''लक्ष्मी मुक्ति'' नामक कार्यक्रम चला जिसके परिणामस्वरूप बहुत से लोगों ने अपनी जमीन–जायदाद में अपनी पत्नी का अंश उनके नाम कर दिया। इससे उनके सामाजिक रूपान्तरण को एक नई दिशा मिली।

सामाजिक रूपान्तरण के इसी क्रम में महिलाओं ने भूमंडलीकरण को समाज के वंचित तबके के नजरिए से भी समझने का प्रयास किया और भारतीय स्त्रियों के ऊपर पड़ने वाले प्रभावों को चिन्हित किया। कुपोषण, गरीबी और भ्रूणहत्या से जूझते भारत में हम किस नारी सौंदर्य की चर्चा कर रहे हैं। इसी बिन्दु पर आकर सौंदर्य प्रतियोगिताओं का भी मुखर विरोध किया। 1992 में राजस्थान में भंवरी देवी के साथ हुए बलात्कार की घटना ने जहाँ कार्यस्थल पर महिलाओं की सुरक्षा की मांग पर बल दिया जिसके परिणामस्वरूप 1997 में कार्यक्षेत्र पर यौनउत्पीड़न के विरूद्ध कानून आया। विशाखा गाइड लाइन्स के आधार पर कार्यस्थल और विभिन्न शैक्षिक संस्थाओं में यौन उत्पीड़न के विरूद्ध समितिओं का निर्माण उनके रूपान्तरण को एक मजबूत स्थिति प्रदान करता है। रूपान्तरित होते सामाजिक स्वरूप की इसी कड़ी में महिलाओं के घरेलू हिंसा के खिलाफ होने वाले आंदोलनों को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। जिसके परिणामस्वरूप ''धरेलू हिंसा अधिनियम'' 2005 अस्तित्व में आया। उपरोक्त विश्लेषण में अभी बहुत कुछ तथ्य जोड़ा जा सकता है जिसके माध्यम से यह कहा जा सकता है कि महिलाओं के अपने संघर्ष ने उनके सामाजिक रूपान्तरण में आमूल–चूल बदलाव अथवा परिवर्तन किया है।

इस स्थान पर पहुँचकर बरबस ही मुझे महाप्राण निराला जी की कविता अत्यंत प्रासंगिक लगती है– कि –

''नहीं छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार
श्याम तन भर बँधा यौवन,
नत नयन, प्रिय कर्मरत मन
गुरू हथौड़ा हाथ,
करती बार–बार प्रहार
सामने तरू मालिका अट्टालिका, प्राकार।''

.....

चढ़ रही थी धूप
गर्मियों के दिन,
दिवा का तमतमाता रूप

उठी झुलसाती हुई लू
रूई–ज्यों जलती हुई भू
गर्द चिनगी छा गई
प्रायः हुई दुपहर
वह तोड़ती पत्थर।''.....
.....
देखते देखा मुझे तो एक बार
उस भवन की ओर देखा, छिन्नतार
देखकर मुझे उस दृष्टि से,
जो मार खा रोई नहीं।''

यहाँ पर महिला जो इतनी दुरूह एवं विषम परिस्थितियों में बराबर अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रही वह किसी एक स्त्री की दास्तान नहीं, बल्कि सम्पूर्ण भारतीय स्त्रियों की किसी न किसी पत्थर स्वरूप जड़ रूपी व्यवस्था के खिलाफ एक मजबूत एवं दृढ़ निश्चयी संघर्ष को परिलक्षित करता है। साथ ही साथ इस संघर्ष के परिणाम स्वरूप उसे जो दंश का मार झेलना पड़ता है उससे वह घबराती नहीं बल्कि उस जड़रूपी, असमानता युक्त व्यवस्था पर गम्भीर प्रहार करती है। निराला जी अपनी इस कविता में भारतीय महिलाओं के संघर्ष के परिणाम स्वरूप प्राप्त होने वाली सकारात्मक सामाजिक रूपान्तरण का पूरा लेखा–जोखा प्रस्तुत करने में बखूबी कामयाब रहे है ऐसा कहने में मुझे कोई संकोच नहीं।

उपरोक्त पूर्ण विमर्श से मुझे अंततः यही निष्कर्ष मिलता है कि यदि स्त्री आज किसी प्लेटो को यह कहने से रोकने में सक्षम हुई है कि ''ईश्वर की सबसे बड़ी कृपा कि उसने उसे स्वतंत्र पैदा किया गुलाम नही और दूसरी बड़ी कृपा कि ईश्वर ने उसे पुरूष बनाया, स्त्री नहीं, तो यह स्त्रियों के अथक संघर्ष एवं साामजिक रूपान्तरण की सफलता की बानगी है। आज के वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्त्रियों का सामाजिक रूपान्तरण जिस अवस्था में पहुँच गया है और जिस दिशा में गतिशील है, उस अवस्था में शायद अब अरस्तू यह परिभाषा नहीं दे सकता कि ''औरत कुछ गुणवत्ताओं की कमियों के कारण ही औरत बनती है। हमें स्त्री के स्वभाव से यह समझना चाहिए कि प्राकृतिक रूप से उनमें कुछ कमियॉ है..... आदि–आदि। और न ही सन्त आगस्टाइन यह घोषणा कर सकते है कि ''औरत वह जीव है जो न स्थिर है और न कृत संकल्प..... ।'' क्योंकि आज की स्थितियॉ अब उन्हें यह सब कहने से रोकती नहीं है अपितु महिलाओं के अपने लम्बे संघर्ष ने उपरोक्त प्लेटों, अरस्तू, आगस्टाइन आदि जैसे लोगों के इन विचारो को अप्रसांगिक बना दिया है। इस प्रकार यहाँ तक जो यात्रा तय हुई है, उसमें महिलाओं का एक लम्बा दुरूह संघर्ष रहा है। किंतु वर्तमान भारत में स्त्रियों का सामाजिक रूपान्तरण उन्हें उनके अस्तित्वबोध के बहुत पास ले जा रहा है। अतः मुझे यह कहने में खुशी की अनुभूति हो रही है कि भारतीय महिलाओं का सामाजिक रूपान्तरण जिस स्वरूप की ओर गतिशील है वह धनात्मक है, सकारात्मक है, सृजनात्मक है एवं समन्वयात्मक है। परिणाम स्वरूप समाजरूपी रथ के दो पहिये स्त्री एवं पुरूष जो काफी विषम थे अब काफी समरूप हो चले है। अतएव समाजरूपी रथ की चाल भी निरन्तर समरूपता की ओर गतिशील होती जा रही है।

संदर्भ

खेतान, प्रभा (1998) : *स्त्रीः उपेक्षिता – सीमोन द बोउवार,* नई दिल्ली, हिन्द पॉकेट बुक्स

खरे, रेखा (1997) : *निराला की कविताएँ और काव्य भाषा,* नई दिल्ली, लोकभारती

www.samayantar.com

shodhganga.inflibnet.ac.in

https://support.google.com

https://hi.m.wikipedia.org.

https://omprakashkashyap.wordpress.com

gopalpradhan.blogspot.com,2015/12

ignca.nic.in>ne_spirit06_hn